पसन्द करते है। अधिक आक्रमण होने से पौधे पत्ती रहित हो जाते है।

नियंत्रण : सुबह ओस पड़ने के समय राख का बुरकाव करने से भी प्रौढ़ पौधा पर नहीं बैठता जिससे नुकसान कम होता है। जैविक विधि से नियंत्रण के लिए अजादीरैक्टिन 300 पीपीएम @ 5–10 मिली./लीटर या अजादीरैक्टिन 5 प्रतिशत @ 0.5 मिली./लीटर की दर से दो या तीन छिड़काव करने से लाभ होता है। इस कीट का अधिक प्रकोप होने पर कीटनाशी जैसे डाईक्लोरोवास 76 ईसी. @ 1.25 मिली./लीटर या ट्राइक्लोफेरान 50 ईसी. @1 मिली..लीटर या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल. @ 0.5 मिली./लीटर की दर से 10 दिनो के अन्तराल पर पर्णीय छिड़काव करें।

फल मक्खी : इस कीट की सूण्डी अधिक हानिकारक होती है। प्रौढ़ मक्खी गहरे भूरे रंग की होती है। इसके सिर पर काले तथा सफेद धब्बे पाये जाते हैं। प्रौढ़ मादा छोटे, मुलायम फलों के छिलके के अन्दर अण्डा देना पसन्द करती है, और अण्डे से सूड़ी (ग्रब्स) निकलकर फलों के अन्दर का भाग खाकर नष्ट कर देते हैं। कीट फल के जिस भाग पर अण्डा देती है वह भाग वहाँ से टेढ़ा होकर सड़ जाता है और नीचे गिर जाता है।

नियंत्रण : गर्मी की गहरी जुताई या पौधें के आस पास खुदाई करें ताकि मिट्टी की निचली परत खुल जाए जिससे फल मक्खी का प्यूपा धूप द्वारा नष्ट हो जाये तथा शिकारी पक्षियों के खाने से नष्ट हो जो ग्रसित फलों को इकट्ठा करके नष्ट कर देना चाहिए। नर फल मक्खी को नष्ट करने के लिए प्लास्टिक की बोतलों में इथेनाल, कीटनाशक (डाईक्लोरोवास या कार्बारिल या मैलाथियान), क्यूल्यूर को 6:1:2 के अनुपात के घोल में लकड़ी के टूकड़े को डुबोकर, 25 से 30 फंदा खेत में विभिन्न स्थानों पर स्थापित कर देना चाहिए। कार्बारिल 50 डब्ल्यूपी.@ 2 ग्राम/लीटर या मैलाथियान 50 ईसी @ 2 मिली./लीटर पानी को लेकर 10 प्रतिशत शीरा अथवा गुड़ में मिलाकर जहरीले चारे को 250 जगहों पर 1 हे. खेत में उपयोग करना चाहिए। प्रतिकर्षी 4 प्रतिशत नीम की खली का प्रयोग करें जिससे जहरीले चारे की ट्रैपिंग की क्षमता बढ़ जाये। आवश्यकतानुसार कीटनाशी जैसे क्लोरेंट्रानीलीप्रोल 18.5 एससी. @ 0.25 मिली./लीटर या डाईक्लारोवास 76 ईसी. @ 1.25 मिली./लीटर पानी की दर से भी छिड़काव कर सकते हैं।

प्रमुख रोग एवं नियंत्रण

चूर्णील आसिता : रोग का प्रथम लक्षण पत्तियों और तनों की सतह पर सफेद या धुँधले धूसर रंग के पावडर जैसा दिखाई देता है। कुछ दिनों के बाद वे धब्बे चूर्णयुक्त हो जाते हैं। सफेद चूर्णी पदार्थ अंत में समूचे पौधे की सतह को ढंक लेता है। अधिक प्रकोप के कारण पौधे का असमय ही नियंत्रण हो जाता है इसके लिए फलों का आकार छोटा रह जाता है।

नियंत्रण : रोकथाम हेतु रोग पीड़ित पौधों के खेत में फफूँदनाशक दवा जैसे 0.05 प्रतिशत ट्राइडीमोर्फ अर्थात् 1/2 मि.ली. दवा 1 लीटर पानी में घोलकर सात दिन के अंतराल पर छिड़काव करें। इस दवा के उपलब्ध न होने पर फ्लूसिलाजोल 1 ग्रा./ली. या हेक्साकोनाजोल 1.5 मी.ली./लीटर या माईक्लोबूटानिल 1 ग्राम/10 लीटर पानी के साथ 7 से 10 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

मृदुरोमिल फफूँदी : यह रोग वर्षा एवं ग्रीष्म कालीन वाली दोनों फसल में समान रूप से आता है। उत्तरी भारत में इस रोग का प्रकोप अधिक होता है। इस रोग के मुख्य लक्षण पत्तियों पर कोणीय धब्बे जो शिराओं द्वारा सीमित होते हैं। ये कवक पत्ती के ऊपरी पृष्ठ पर पीले रंग के होते हैं तथा नीचे की तरफ रोयेंदार वृद्धि करते हैं।

नियंत्रण : बचाव के लिए बीजों को मेटलएक्सिल नामक कवकनाशी की 3 ग्राम दवा प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए तथा मैंकोजेब 0.25 प्रतिशत घोल का छिड़काव रोग के लक्षण प्रारम्भ होने के तुरन्त बाद फसल पर करना चाहिए। यदि संक्रमण उग्र दशा में हो तो मैटालैक्सिल + मैंकोजेब का 2.5 ग्राम/लीटर की दर से या डाइमेयामर्फ का 1 ग्राम/लीटर + मैटीरैम का 2.5 ग्राम/लीटर की दर से 7 से 10 के अंतराल पर 3–4 बार छिड़काव करें।

मोजैक विषाणु रोग: यह रोग विशेषकर नई पत्तियों में चितकबरापन और सिकुड़न के रूप में प्रकट होता है। पत्तियाँ छोटी एवं हरी पीली हो जाती है। संक्रमित पौधे की वृद्धि रूक जाती है। इसके आक्रमण से पर्ण छोटे और पुष्प छोटे–छोटे पत्तियों जैसे बदले हुए दिखाई पड़ते हैं। ग्रसित पौधा बौना रह जाता है और उसमें फलत बिल्कुल नहीं होता है।

नियंत्रण : बचाव के लिए रोग ग्रस्त पौधों को उखाड़कर जला देना चाहिए। रोग वाहक कीटों से बचाव के करने के लिए इमिडाक्लोप्रिड 0.3 ग्राम/लीटर का घोल बनाकर दस दिनों के अन्तराल में 2–3 बार फसल पर छिड़काव करना चाहिए।

विशेष जानकारी के लिए सम्पर्क करें–

डा. बिजेन्द्र सिंह

निदेशक

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान

पो.बा. नं. 01, पो. आ.– जक्खिनी (शाहँशाहपुर),

वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश

दूरभाष– 0542–2635236/237/247; फैक्स– 0543–229007

ई–मेलः director.iivr@icar.gov.in वेबः www.iivr.org.in

संकलन– डी.आर. भारद्वाज, केशव कुमार गौतम, सुधाकर पाण्डेय, मनीमुरूगन, शुभदीप रॉय, ए.बी. राय एवं अशोक कुमार सिंह

प्रकाशक– डा. बिजेन्द्र सिंह, निदेशक,

भा.कृ.अनु.प.–भा.स.अनु.सं., वाराणसी

चतुर्थ संस्करण– 5000 प्रतियाँ, जनवरी 2018

प्रसार पुस्तिका सं. 37/2018

लौकी की वैज्ञानिक खेती

भाकृअनुप ICAR

हर कदम, हर डगर किसानों का हमसफर

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agri search with a human touch

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान

शाहँशाहपुर (जक्खिनी),वाराणसी– 221 305, उ.प्र.

लौकी की वैज्ञानिक खेती

सब्जियों में लौकी एक कद्दूवर्गीय महत्वपूर्ण सब्जी है। इसकी खेती के अलावा विभिन्न प्रकार के व्यंजन जैसे रायता, कोफ्ता, हलवा, खीर इत्यादि बनाने के लिए प्रयोग करते हैं। यह कब्ज को कम करने, पेट को साफ करने, खाँसी या बलगम दूर करने में अत्यन्त लाभकारी है। इसके मुलायम फलों में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, खाद्य रेशा, खनिज लवण के अलावा प्रचुर मात्रा में अनेकों विटामिन पाये जाते हैं। लौकी की खेती पहाड़ी क्षेत्रों से लेकर दक्षिण भारत के राज्यों तक विस्तृत रूप में की जाती है। निर्यात की दृष्टि से सब्जियों में लौकी अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

जलवायु

लौकी की अच्छी पैदावार के लिए गर्म एवं मध्यम आर्द्रता वाले भौगोलिक क्षेत्र सर्वोत्तम होते हैं। अतः इसकी फसल जायद तथा खरीफ दोनों ऋतुओं में सफलतापूर्वक उगायी जा सकती है। बीज अंकुरण के लिए 30–35 डिग्री सेन्टीग्रेड और पौधों की बढ़वार के लिए 32–38 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान उत्तम होता है।

भूमि और भूमि की तैयारी

बलुई दोमट तथा जीवांश युक्त चिकनी मिट्टी जिसमें जल धारण क्षमता अधिक तथा पी.एच.मान 6.0–7.0 हो लौकी की खेती के लिए उपयुक्त होती है। पथरीली या ऐसी भूमि जहाँ पानी लगता हो तथा जल निकास का अच्छा प्रबन्ध न हो इसकी खेती के लिए अच्छी नहीं होती है। खेत की तैयारी के लिए पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल तथा बाद में 2–3 जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करते हैं। प्रत्येक जुताई के बाद खेत में पाटा चलाकर मिट्टी को भुरभुरी एवं समतल कर लेना चाहिए जिससे खेत में सिंचाई करते समय पानी कम या ज्यादा न लगे।

उन्नत किस्में

काशी गंगा : इस किस्म के पौधे मध्यम बढ़वार वाले तथा तनों पर गाँठे कम दूरी पर विकसित होती हैं। फल मध्यम लम्बा (30.0 से.मी.) व फल व्यास कम (6.90 से.मी.) होता है। प्रत्येक फल का औसत भार 800–900 ग्राम होता है। गर्मी के मौसम में 50 दिनों बाद एवं बरसात में 55 दिनों बाद फलों की प्रथम तुड़ाई की जा सकती है। इस प्रजाति की औसत उत्पादन क्षमता 43.5 टन/हे. है।

काशी बहार : इस संकर प्रजाति में फल पौधे के प्रारम्भिक गाँठों से बनने प्रारम्भ होते हैं। फल हल्के हरे, सीधे, 30–32 से.मी. लम्बे 780–850 ग्राम वजन वाले तथा 7.89 से.मी. व्यास वाले होते हैं। इसकी औसत उपज 52 टन/हे. है। गर्मी एवं बरसात दोनों ऋतुओं के लिए उपयुक्त किस्म है। यह प्रजाति नदियों के किनारे उगाने के लिए भी उपयुक्त है।

पूसा नवीन : इस किस्म के फल बेलनाकार, सीधे तथा लगभग 550 ग्राम के होते हैं। इस प्रजाति की उत्पादन क्षमता 35–40 टन/हे. है।

अर्का बहार : इस प्रजाति के फल सीधे, मध्यम आकार के लगभग एवं 1 किलो वजन के होते हैं। फल हल्के हरे रंग के होते हैं इसकी उत्पादन क्षमता 40–50 टन/हे. है।

नरेन्द्र रश्मि : फल हल्के हरे एवं छोटे–छोटे होते हैं। फलों का औसत वनज 1 कि.ग्रा. होता है। इस प्रजाति की औसत उपज 300 कु./हे. है। पौधों पर चूर्णिल व मृदुरोमिल आसिता का प्रकोप कम होता है।

पूसा सन्देश : पौधे मध्यम लम्बाई के तथा गाँठों पर शाखाएं कम दूरी पर विकसित होती हैं। फल गोलाकार, मध्यम आकार के व लगभग 600 ग्राम वजन के होते हैं। बरसात वाली फसल 55–60 दिनों व गर्मी वाली फसल 60–65 दिनों बाद फल की प्रथम तुड़ाई की जा सकती है। औसत उपज 32 टन/हे. होता है।

खाद एवं उर्वरक

अच्छी उपज हेतु पोषण के रूप में 50 किग्रा. नत्रजन, 35 किग्रा. फास्फोरस एवं 30 किग्रा. पोटाश तत्व के रूप में प्रति हेक्टेयर की दर से देनी चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा, फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा खेत की तैयारी के समय देना चाहिए। बची हुई नत्रजन की आधी मात्रा दो समान भागों में बाँटकर 4–5 पत्ती की अवस्था तथा शेष आधी मात्रा पौधों में फूल बनने के पहले टाप ड्रेसिंग के रूप में देनी चाहिए।

बीज की मात्रा

सीधी बीज बुआई के लिए 2.5–3 किग्रा. बीज एक हेक्टेयर क्षेत्रफल के लिए पर्याप्त होता है, परन्तु पालीथीन के थैलों या नियंत्रित वातावरण युक्त गृहों में (प्रो.–ट्रे) नर्सरी उत्पादन करने से 1 किग्रा. बीज ही पर्याप्त होता है।

बुआई का समय

लौकी की बुआई ग्रीष्म ऋतु (जायद) में 15–25 फरवरी तक तथा वर्षा ऋतु (खरीफ) में 15 जून से 15 जुलाई तक कर सकते हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में बुआई मार्च–अप्रैल के महीने में की जाती है।

बुआई की विधि

लौकी की बुआई के लिए गर्मी के मौसम में 2.5–3.5 व वर्षा के मौसम में 4.0–4.5 मीटर की दूरी पर 50 सेमी. चौड़ी व 20–25 से.मी. गहरी नाली बना लेते हैं। इन नालियों के दोनों किनारे पर 60–75 सेमी. (गर्मी वाली फसल) व 80–85 सेमी. (वर्शा कालीन फसल) की दूरी पर बीज की बुआई करते हैं। एक स्थान पर 2–3 बीज 4 सेमी. की गहराई पर बोना चाहिए। बुवाई के समय बीज का नुकीला भाग नीचे की तरफ रखना चाहिए।

सिंचाई

खरीफ ऋतु में खेत की सिंचाई करने की आवश्यकता नहीं होती है परन्तु वर्षा न होने पर 10–15 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। अधिक वर्षा की स्थिति में जल के निकास के लिए नालियों का गहरा व चौड़ा होना आवश्यक है। गर्मियों में अधिक तापमान होने के कारण 4–5 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण एवं निकाई गुड़ाई

दोनों ऋतु में सिंचाई के बाद खेत में काफी मात्रा में खरपतवार उग आते हैं। अतः उनको खुर्पी की सहायता से 25–30 दिनों तक निकाई करके खरपतवार निकालते रहना चाहिए। लौकी में पौधों की अच्छी वृद्धि एवं विकास के लिए 2–3 बार निकाई–गुड़ाई करके जड़ों के पास हल्की मिट्टी चढ़ा देना चाहिए। रासायनिक खरपतवारनाशी के रूप में ब्यूटाक्लोर रसायन की 2 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से बीज बुआई के तुरन्त बाद छिड़काव करना चाहिए।

सहारा देना

वर्षा ऋतुओं में लौकी गुणवत्ता की उपज अधिक प्राप्त करने के लिए लकड़ी या लोहे के द्वारा निर्मित मचान पर चढ़ा कर खेती करनी चाहिए। इससे फलों का आकार सीधा एवं रंग अच्छा रहता है तथा बढ़वार भी तेजी से होती है। प्रारम्भिक अवस्था में निकलने वाली कुछ शाखाओं को काटकर निकाल देना चाहिए इससे ऊपर विकसित होने वाली शाखाओं में फल ज्यादा बनते हैं। सामान्यतः मचान की ऊँचाई 5.0–5.5 फीट तक रखते हैं। इस पद्धति के उपयोग से सस्य क्रिया सम्बन्धित लागत कम हो जाती है।

फलों की तुड़ाई एवं उपज

लौकी के फलों की तुड़ाई मुलायम अवस्था में करना चाहिए। फलों का वजन किस्मों पर निर्भर करता है। फलों की तुड़ाई डण्ठल लगी अवस्था में किसी तेज चाकू से चार से पाँच दिन के अंतराल पर करना चाहिए ताकि पौधें पर ज्यादा फल लगे। औसतन लौकी की उपज 35–50 टन/हे. होती हैं।

प्रमुख कीट एवं नियंत्रण

कद्दू का लाल कीट (रेड पम्पकिन बिटिल): इस कीट का वयस्क चमकीली नारंगी रंग का होता हैं तथा सिर, वक्ष एवं उदर का निचला भाग काला होता है। सूण्ड़ी जमीन के अन्दर पायी जाती है। इसकी सूण्डी व वयस्क दोनों क्षति पहुँचाते हैं। प्रौढ़ पौधों की छोटी पत्तियों पर ज्यादा क्षति पहुँचाते हैं। ग्रब इल्ली जमीन में रहती है जो पौधों की जड़ पर आक्रमण कर हानि पहुँचाती है। ये कीट जनवरी से मार्च के महीनों में सबसे अधिक सक्रिय होते है। अक्टूबर तक खेत में इनका प्रकोप ज्यादा रहता है। नये एवं छोटे पौधे आक्रमण के कारण मर जाते हैं। फसलों के बीज पत्र एवं 4–5 पत्ती अवस्था इन कीटों के आक्रमण के लिए सबसे अनुकूल है। प्रौढ़ कीट विशेषकर मुलायम पत्तियाँ अधिक